रजि० नं० बी ४४४८
लाअिसेन्स नं० १५

स्वार्थपूर्ण मांग

हरिजनसेवक

दो आना

(संस्थापक : महात्मा गांधी)

भाग १७ सम्पादक : मगनभाअी प्रभुदास देसाअी अंक ४१

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद–९

अहमदाबाद, शनिवार, ता० १२ दिसम्बर, १९५३

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

काम पानेका हक

हरअेक मनुष्यका जीनेका हक है और अिसलिअे अपना पेट भरने तथा कपड़े और मकानके लिअे रोजी पानेका हक है। लेकिन अिस सीधे-सादे कार्यके लिअे हमें अर्थशास्त्रियों या अुनके कानूनोंकी मदद लेनेकी कोअी जरूरत नहीं।

'कलकी चिन्ता न करो' अिस आदेशकी प्रतिध्वनि संसारके लगभग सभी धर्मशास्त्रोंमें गूंजती मालूम होती है। सुव्यवस्थित समाजमें जीविकाका साधन प्राप्त करना सबसे आसान होना चाहिये, और अैसा देखनेमें भी आता है। सच कहा जाय तो देशकी सुव्यवस्थाकी कसौटी अिस बातसे नहीं होनी चाहिये कि अुसमें कितने लोग करोड़पति हैं, बल्कि आम जनतामें पाये जानेवाले भुखमरीके अभावसे होनी चाहिये।

'स्पीचेस अेण्ड राअिटिंग्स ऑफ महात्मा गांधी' — चौथी आवृत्ति, नटेसन अेण्ड कंपनी, मद्रास; पृ० ३५०

भूखों मरते करोड़ों लोग अेक ही कविताकी मांग करते हैं — शक्ति देनेवाला भोजन। लेकिन वह अुन्हें दिया नहीं जा सकता। वह भोजन अुन्हें कमाना चाहिये, और अुसे वे अपने पसीनेसे ही कमा सकते हैं।

यंग अिंडिया, १३–१०–'२१

अिसलिअे आप खयाल कीजिये कि ३० करोड़ लोगोंको काम न मिलता हो और करोड़ों लोग प्रतिदिन कामके अभावमें स्वाभिमान-शून्य और अीश्वर-निष्ठासे शून्य बन जायं, तो यह कितना भयंकर संकट माना जायगा। अुनके सामने अीश्वरका नाम रखनेकी मेरी हिम्मत नहीं होती। अिन करोड़ों भूखे लोगोंके सामने, जिनकी आंखोंका सारा तेज मर गया है और रोटी ही जिनका अीश्वर है, अीश्वरका नाम रखना और अुस कुत्तेके सामने रखना दोनों बराबर है। अुनके सामने अगर मुझे अीश्वरका सन्देश ले जाना हो, तो पवित्र परिश्रमका सन्देश ही ले जाना चाहिये। बढ़िया नाश्ता करके यहां बैठे हों और अुससे भी बढ़िया भोजनकी प्रतीक्षामें हों, अुस समय अीश्वरकी बात करना ठीक है; लेकिन जिन करोड़ों लोगोंको दो जून खानेको भी नहीं मिलता, अुनके सामने मैं अीश्वरकी बात किस तरह करूं? अुन्हें तो अीश्वर रोटी और घीके रूपमें ही दर्शन दे सकता है।

यंग अिंडिया, १५–१०–'३१

भूखों मरते और बेकारीके शिकार बने हुअे लोगोंके सामने तो अीश्वर भी काम और रोजीके रूपमें, रोटीकी गारंटीके रूपमें ही प्रकट हो सकता है और तभी वे अुसे स्वीकार कर सकते हैं।

यंग अिंडिया, १३–१०–'२१

जब तक देशमें अेक भी सबल पुरुष या स्त्री बेकार हो, तब तक आरामसे बैठने या पेट भरकर खानेमें हमें शरम आनी चाहिये।

यंग अिंडिया, ६–१०–'२१

जिसने भोजन पानेके लिअे किसी प्रकारका प्रामाणिक परिश्रम न किया हो, अैसे स्वस्थ आदमीको मुफ्त खाना देना मेरी अहिंसाको मंजूर नहीं; मेरे हाथमें सत्ता हो तो जहां मुफ्त खाना दिया जाता है, वहांके सारे सदाव्रतों और अन्नक्षेत्रोंको मैं बन्द करा दूं। अिससे राष्ट्रकी अवनति हुअी है और प्रमाद, आलस्य, ढोंग तथा अपराधको प्रोत्साहन मिला है।

यंग अिंडिया, १३–८–'२५

अैसा न कहें कि हम गरीबोंको दान देकर अुनका पालन करेंगे। केवल दो ही वर्गके लोग दानके पात्र हैं, अन्य नहीं। अेक, अैसे ब्राह्मण जिनके पास कुछ नहीं है और धर्मोपदेश देना ही जिनका काम है; दूसरे, अपाहिज और अंधे लोग। सशक्त शरीरवाले आलसियोंको दान देनेकी जो अन्यायपूर्ण प्रथा हमारे देशमें चलती है, वह हमारे लिअे स्थायी लज्जा और बदनामीकी बात है; अिस लज्जाका अन्त करनेके लिअे ही मैं चरखेका सन्देश लेकर देशभरमें घूम रहा हूं।

यंग अिंडिया, २४–२–'२७ मो० क० गांधी

धन्यवाद

महाभारतमें कहा है कि खांडव वनके लोग आर्योंको अितना तंग करते थे कि अुन्हें ठीक करनेके लिअे अर्जुनको अुनसे युद्ध करना पड़ा था। वनप्रदेश होनेके कारण लड़ाअीमें खांडव वनके लोगोंका सामना करना अर्जुन जैसे वीर योद्धाके लिअे भी अेक बार तो मुश्किल हो गया। तंग आकर अंतमें अुन्होंने अग्नि-अस्त्र फेंका, जिससे खांडव वनमें चारों ओर आग लग गअी। कुछ समय बाद शायद श्रीकृष्णके कहने पर या आगसे परेशान होकर नाग लोग अर्जुनकी शरणमें आये, अिससे अर्जुनने अिन्द्रास्त्र फेंककर आग बुझा दी।

आज करीब अैसा ही बरताव हमारी सेना और सेनापति आसामके जंगलमें वहांके निवासियोंके साथ करते और हवाअी जहाजसे बम बरसाते और लोगोंको जला देते। परंतु अखबारोंसे पता चलता है कि अैन मौके पर श्री जवाहरलालजीने अिस जंगलीपनको रोक लिया और दुनियामें होनेवाली बदनामीसे हमें बचा लिया।

ब्रिटिश राज्यके समयमें हमारे सरहद प्रांतनिवासी भाअी-बहनों पर अंग्रेजी हुकूमतने बमवर्षा की थी। तब हम लोगोंने अुसके खिलाफ आवाज अुठाअी थी और अुसका कड़ा विरोध किया था। तब अेक असावधान अंग्रेज हाकिमने जवाबमें कहा था कि अिस तरहकी बमवर्षासे विद्रोही प्रजा पर अच्छा नैतिक प्रभाव पड़ता है; अुससे थोड़ी हिंसामें ज्यादा काम बनता है।

अुसी तरह आज वही अंग्रेज प्रजा माअू-माअू जातिके लोगों पर बम फेंक रही है और चंद अंग्रेज भी अुसकी निंदा कर रहे हैं।

अैसे मौके पर हमारी सेना भी अिस तरह आसाममें बम बरसाती तो कैसी भद्दी बात होती? पंडित जवाहरलालजीको हम हार्दिक बधाअी देते हैं कि अुन्होंने भारतका नाम बदनाम न होने

www.vinoba.in

दिया। लड़ाीमें भी जंगलीपन और बर्बरताको तो हराम ही मान कर चलना चाहिये। अैसी बमवर्षा, रोगजंतुके बम, अणुबम अित्यादिकी मनाही होनी चाहिये। भारत 'यूनो' के मारफत अैसे काम कर सके, यही हमारा अिरादा होना चाहिये। अिसके लिअे हमें खुद अिनसे परहेज रखकर चलना होगा, जैसा कि पं० जवाहरलालजीने किया।

७–१२–'५३ मगनभाअी देसाअी

हमारे दो बड़े दुर्गुण

[भागलपुर जिलेके शेरमारी बाजार पड़ाव पर १६–११–'५३ को किये गये प्रवचनसे।]

आलस्य और बैमनस्य हमारे समाजके अिन दो रिपुओंसे हमें छुटकारा पाना चाहिये। ये दो रिपु हमारे देशभरमें हैं। बिहारमें कम हैं या ज्यादा, अिसमें हम नहीं पड़ते। पर बिहारमें जो दुर्गुण हैं अुनमें बैमनस्य अेक दुर्गुण है। "आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपुः"—मनुष्यका सबसे बड़ा रिपु आलस्य है। हमने सबसे बड़े रोगको महान् रोग कहा है। पर वह अितना महान् नहीं है। हमारे यहांके आलस्यने तत्त्वज्ञानका रूप लिया है। आलसी लोग हमें लिखकर पूछते हैं कि बाबाजी, आपको आत्मज्ञान हुआ नहीं दीखता है, नहीं तो आप क्यों घूमते? हम कहते हैं: हां, हमें आत्मज्ञान नहीं हुआ है, यह ठीक है। अगर आत्मज्ञान हुआ होता तो हमारा शरीर टिकता नहीं। वह तो कबका भगवान्के पास पहुंच जाता। पर लिखनेवाला समझता है कि अुसे आत्मज्ञान हो गया ह। जो कोअी काम नहीं अुठाता, घरमें बैठा रहता है, थोड़ीसी पेन्शन मिलती है अुससे गुजर हो जाता है, शाम-सबेरे थोड़ा ध्यान कर लेता है और समझता है कि हमें मुक्ति मिल गयी, अैसे आदमीको क्या समझाया जाये? आलस्यका भी अेक तत्त्वज्ञान बना है। आलसी लोग शंकराचार्यका सहारा लेते हैं। कहते हैं, शंकराचार्यने हमें निवृत्ति सिखलायी। निवृत्ति क्या है? यह समझनेकी बात है। अिन लोगोंने मानसिक शांतिको नहीं, शारीरिक शांतिको निवृत्ति माना है! तो लाशको भी निवृत्त मानना होगा और ये जो पेड़ और पत्थर हैं, अिनको तो सबसे अधिक निवृत्त मानना होगा। अिस तरह हमने तमोगुणको निवृत्ति मान लिया है। अिसका नतीजा यह हुआ कि हम सत्त्वगुणको नहीं देखते।

हमारा दूसरा दुर्गुण बैमनस्य है। लोग बात तो करते हैं "प्रेम गली अति सांकरी जामें दो न समाय"—प्रेमकी गली अति संकरी है, अुसमें दो नहीं समाते। हम सब अेक हैं। बोलनेमें तो जरा भी द्वैत सहन नहीं करते, पर व्यवहारमें तो भाअी-भाअीका पटता नहीं। अेक जातका दूसरी जातसे पटता नहीं। और बिहार, बंगालके झगड़ोंकी चर्चा तो अखबारोंमें चलती ही रहती है। बंगाली कहते हैं कि मानभूम हमें मिलना चाहिये और बिहारी कहते हैं कि मानभूम तो हमारा ही रहेगा, लेकिन दार्जिलिंग भी हमारा है। अिसलिअे वह हमें मिलना चाहिये। अिस तरहके जाति-भेद, धर्म-भेद आदिसे देश छिन्न-विच्छिन्न हो गया है। मनुष्य तो मिट ही गया और अुसके सिर पर मुहर लग गअी कि यह कांग्रेसका है और यह प्रजा-समाजवादी पार्टीका है। काम करनेमें भी यह सोचते हैं कि यह तो दूसरी पार्टीका है, अिसके साथ हमारा कैसे बनेगा। अिस तरह हमारे छोटे-छोटे दिल बन गये हैं। और अुनकी खुदकी जबानसे तो अद्वैत छूटता नहीं। आलस्य और बैमनस्य अिन दोनोंने भारतको खतम कर दिया। हमला करनेवाले आते हैं और लोग घरमें सोये ही रहते हैं। और अिधर सेना किला फतह कर लेती है, पर अिन्हें परवाह नहीं। कहते हैं, किला ही फतह किया न, घर तो फतह नहीं किया? पहले टैक्स अेकको देते थे, अब दूसरेको देंगे। वैसे सब आलसी बन गये हैं। आठ-आठ हजार मील दूरसे अंग्रेज किश्तीमें बैठकर आये। अेक किश्तीमें कितने आये होंगे? अुस जमानेमें आजके समान बड़ी-बड़ी नौकायें नहीं थीं। अेक-अेक किश्तीमें बहुत छोटी संख्यामें लोग आये होंगे। अैसी छोटी संख्यामें आकर लोग यहां अड्डा जमाते हैं, यहांके लोगों पर काबू पाते हैं, लोगोंको सिपाही बनाते हैं, कभी अिसको मदद करके अुसको खतम करते हैं, और कभी अुसको मदद करके अिसको खतम करते हैं। और हम अैसे ही चुपचाप यह सारा देखते रहते हैं। हममें कितना बैमनस्य है कि पड़ोसीके घरमें कोअी आग लगाता है, तो हम कहते हैं कि अुसका नसीब अुसके साथ है। अिसलिअे हम कार्यकर्ताओंसे कहते हैं कि अिन दो दुर्गुणोंको छोड़िये। आलस्य और बैमनस्य ये दो राष्ट्रीय दुर्गुण हैं।

विनोबा

मेहनत-मजदूरीकी महिमा

[मुंगेर जिलेके जमालपुर पड़ाव पर दिये हुअे प्रार्थना-प्रवचनसे]

सारी दुनिया मजदूरोंके आधार पर बनी है। पौराणिकोंने कहा था, यह पृथ्वी शेषनागके मस्तक पर स्थिर है। अगर शेषनागका आधार टूट जाय, तो पृथ्वी स्थिर नहीं रह सकेगी, वह जर्रा-जर्रा हो जायगी। हमने सोचा यह शेषनाग कौन है? ध्यानमें आया कि दिनभर शरीर-श्रम करनेवाले मजदूर, जो किस्म-किस्मकी पैदावार करते हैं, ही शेषनाग हैं। सबका आधार अुन मजदूरों पर है। अिसलिअे भगवान्ने मजदूरोंको कर्मयोगी कहा है। लेकिन सिर्फ कर्म करनेसे कोअी कर्मयोगी नहीं हो जाता। हिन्दुस्तानमें कुछ मजदूर खेतोंमें काम करते हैं। कुछ रेलवेमें काम करते हैं। कुछ कारखानोंमें काम करते हैं। दिनभर मजदूरी करते हैं और अपने पसीनेसे रोटी कमाते हैं। जो खून-पसीनेसे रोटी कमाता है, वह धर्म-पुरुष हो जाता है। अुसके जीवनमें पापका आसानीसे प्रवेश नहीं हो सकता। दिनभर काम कर लिया तो रातको गहरी नींद आती है। न दिनमें पापकर्म करनेके लिअे समय मिलता है, न रातको कुछ सूझ सकता है। जिस जीवनमें पाप-चिंतनकी गुंजाअिश ही न हो, वह धार्मिक जीवन होना चाहिये।

पर अैसा अनुभव नहीं हो रहा है। अनुभव तो यह है कि जो काम नहीं करते अुनके जीवनमें तो पाप है ही, पर अुन पापोंने मजदूरोंके जीवनमें भी प्रवेश कर लिया है। कअी प्रकारके व्यसन अुन्हें होते हैं। वे व्यभिचार भी करते हैं। यानी केवल श्रम करनसे कोअी कर्मयोगी नहीं होता। हां, जो श्रम टालता है वह तो कर्मयोगी हो ही नहीं सकता। अुसके जीवनमें पाप हो तो आश्चर्य नहीं, क्योंकि अुसके पास समय फाजिल होता है। जहां समय फाजिल होता है वहां शैतानका काम शुरू होता है। अिसलिअे फुरसती लोगोंके जीवनमें पाप दिखाअी दे तो आश्चर्य नहीं; पर मजदूरी करनेवालोंके जीवनमें पाप दिखता है, तो सोचना चाहिये कि अैसा क्यों होता है। अैसा अिसलिअे होता है कि वे कार्यको पूजा नहीं समझते। लाचारीसे कर्म करना पड़ता है अिसलिअे करते हैं। अगर वे कामसे मुक्त हो सकें तो बहुत ही राजी हो जावेंगे। सच्चे कर्मयोगीकी यह हालत नहीं होती।

हम जेल गये थे। कुछ लोगोंको सादी सजा थी। अुन्हें मजदूरी करना लाजमी नहीं था। वे लोग अैसे ही बैठे रहते थे। खानेको मिलता था वह खा लेते थे, पर अुन्हें दूसरोंसे पांच तोला रोटी कम मिलती थी। अुनकी शिकायत यह नहीं थी कि अुन्हें काम नहीं मिलता। वे तो खुश थे कि काम नहीं करना पड़ता। पर शिकायत यह थी कि दूसरोंसे पांच तोला रोटी कम क्यों

www.vinoba.in

मिलती है? यह बात राजनैतिक कैदियोंकी कर रहा हूं। हमने अुनके बीच निवास किया। अुनके विचार समझे और अुन्हें समझानेकी कोशिश की कि सरकारने जो सादी सजा दी है वह सादी नहीं, भयंकर है। बिना काम किये खाना खुशकिस्मती नहीं, बदकिस्मती है। अंग्रेजोंका राज है, पर हम जो खाते हैं वह अंग्रेजोंका नहीं खाते, वह तो अपने समाजका ही खाते हैं। अुसके बदलेमें समाजको कुछ न दें यह गुनाह है। खुशीकी बात है कि वे यह बात समझ गये और जब जेलरसे काम मांगा, तो जेलर और सुपरिन्टेन्डेन्टको आश्चर्य हुआ कि विनोबाने यह क्या जादू किया।

जहां कर्मयोगका विचार आया, चित्तमें यह बात पैठ गअी कि बिना काम किये खाना पाप है, वहां सारा पाप मिट जाता है, और विषका अमृत बनता है। हिन्दुस्तानमें क्या, सारी दुनियामें फसल मजदूरोंसे ही होती है। अिसलिअे हरअेकके लिअे काम करना लाजमी है।

आज देहाती लोग भी कहते हैं कि हमारे बच्चोंको तालीम मिलनी चाहिये। तालीम किस लिअे मिलनी चाहिये? अिसलिअे नहीं कि लड़का ज्ञानी बनेगा, धर्मग्रन्थ पढ़ सकेगा और जीवनमें हरअेक काम विचारपूर्वक करेगा। पर अिसलिअे कि लड़केको नौकरी मिलेगी और हम जैसे दिनभर खटते हैं वैसे अुसे न खटना पड़ेगा। मजदूर भी अैसा सोचते हैं। भाअियो, कामके प्रति अैसी घृणा मजदूरोंमें भी है। काम न करनेवालोंमें तो है ही।

दिमागी काम करनेवाले लोग मजदूरोंको नीच समझते हैं। अैसी वृत्ति ही बन गअी है। अुन्हें तो कामसे नफरत है ही, पर मजदूरको भी कामसे नफरत है। वह मजदूरी तो करता है पर अुससे अुसे गौरव नहीं लगता।

अच्छे माता-पिता चाहते हैं कि लड़की अच्छे घरमें जाय। अच्छे घरके क्या लक्षण हैं? जिस घरमें पानी भी नहीं खींचना पड़े। जहां पानी नहीं खींचना पड़ता, वहां अुसे अनाज भी नहीं पचता और डाक्टरोंके बिल भरने पड़ते हैं।

कहते हैं लड़कोंके खेलनेका समय है तो खेलने ही देना चाहिये। काम नहीं देना चाहिये। लड़कोंकी तालीमका समय है तो तालीम ही लेने देनी चाहिये। काम नहीं देना चाहिये। तालीमके साथ-साथ काम देते हैं तो वह फैक्टरी बन जाती है। मां भी अपने बच्चेसे कहती है कि बेटा तू पढ़, अभ्यास कर। काम तो लड़की करेगी।

स्कूलमें शिक्षक पढ़ावेंगे, विद्यार्थी पढ़ेंगे, पर सफाअी तो नौकर ही करेंगे। कचरा करनेका काम अध्यापकोंका और साफ करनेका काम नौकरका!

विद्यार्थी-प्रोफेसर काम नहीं करेंगे। व्यापारी काम नहीं करेंगे। वे तो केवल लिखा-पढ़ी करेंगे। दसके सौ बनाना है तो दस गुना काम नहीं करते, अुन्हें तो केवल अेक शून्य अुस पर रख देना है। और जो ज्ञानी हैं वे काम करेंगे तो बहुत बुरी बात है। ज्ञानी तो खा सकते हैं और आशीर्वाद ही दे सकते हैं। काम नहीं कर सकते। अगर कोअी सवेरे अुठकर पीसता है, तो वह ज्ञानी नहीं मजदूर कहलायेगा। ज्ञानीको, योगीको, काम नहीं करना चाहिये। बूढ़ोंको कामसे मुक्त रखना ही चाहिये। बूढ़ोंको काम देना निष्ठुरता मानी जायगी। यानी बूढ़ा, बच्चा, योगी, ज्ञानी, व्यापारी, वकील, अध्यापक, विद्यार्थी किसीको काम नहीं करना चाहिये। अितना बेकार वर्ग खड़ा हो जायगा तो बेकारी बढ़ेगी ही। अगर अैसा होता कि जो काम नहीं करता, वह खाता भी नहीं तो कुछ ठीक होता। पर वह तो अधिक खानेको मांगता है। अैसी समाज-रचना जहां है, वहां मजदूर समझते हैं कि हमें भी काम करनेसे छुट्टी मिले तो अच्छा होगा। अैसे समाजमें, जहां लोग लाचारीसे काम करते हैं, कर्मयोगी हो ही नहीं सकते। जो काम टालते हैं, जो काम नहीं करते हैं, अुनका जीवन धार्मिक होता ही नहीं। अिस तरह हमारा समाज दुराचारी बना है। क्योंकि हमारे समाजमें श्रमकी प्रतिष्ठा नहीं रही।

शरीर-श्रम करनेवालेको हम नीच मानते हैं। अुन्हें किसी प्रकारकी छुट्टियां नहीं होतीं। मेहतरको अगर अेक दिनकी छुट्टी दें, तो सारा गांव गन्दा हो जायगा। अितना जो अुपकारी है अुसे हम नीच मानते हैं। अुसे हम साफ रहनेके लिअे साबुन आदि भी नहीं देते। न अुसे अिज्जत है, न प्रतिष्ठा है, न सम्मान है।

मेहतरको तो नीच माना ही, पर अपनी जो माता है अुसे भी हमने नीच माना। शास्त्रोंमें आया है दस अुपाध्यायोंकी बराबरीमें अेक शिक्षक और सौ शिक्षकोंकी बराबरीमें अेक पिता। और हजार पिताओंसे भी अेक माता बढ़कर है। माताका अैसा गौरव किया है। यह तो शास्त्रकी बात है। पर हम स्त्रियोंको हीन मानते हैं। स्त्रियां खेत पर मजदूरीके लिअे जाती हैं तो अुन्हें मजदूरी कम देते हैं। स्त्रियोंको तो ज्यादा देनी चाहिये, क्योंकि अुन्हें घरका भी सब देखना होता है। बच्चोंका लालन-पालन करना होता है। ज्यादाकी बात तो दूर, बराबरीका भी नहीं देते। हर जगह स्त्रियोंको कम मजदूरी दी जाती है और स्त्रियोंको भार समझते हैं। स्त्रियां तो रात-दिन काम करती हैं, फिर भी अुनका भार लगता है। क्योंकि कामकी प्रतिष्ठा ही नहीं है। कहते हैं स्त्रियां अुत्पादनका काम नहीं करतीं, सिर्फ रसोअी करती हैं। रसोअी क्या है यह हम समझते नहीं। रसोअी अुत्पादनका काम नहीं तो क्या बढ़अीका अुत्पादनका काम है? बढ़अी क्या करता है? काठ लेता है और अुससे नअी चीज बनाता है। वैसे ही स्त्री आटा लेकर रोटी बनाती है। अगर नयी चीज पैदा करनेको अुत्पादन कहो, तो ब्रह्मदेवके सिवा अुत्पादन करनेवाले और किसीका हमें पता नहीं है। किसान क्या करता है? परमेश्वरका पैदा किया बीज खेतमें बोता है। अुससे हजारों गुना पाता है, तो वह भी तो परमेश्वर ही करता है। काठकी कुर्सी बनाना, चमड़ेका जूता बनाना यानी अेक चीजका दूसरीमें रूपान्तर करना है।

जैसे काठकी कुर्सी बनाना काठका रूपान्तर करना है, वैसे ही गेहूंका आटा बनाना, रोटी बनाना रूपान्तर है। अिसे अुत्पादन तब समझेंगे जब हमारी मातायें और बहनें कहेंगी कि हम रोटी बनायेंगी बशर्ते कि हमें अठारह आने रोज मिले?

पुराने जमानेमें ब्राह्मणको और शूद्रको अलग-अलग पैसा मिलता था। दोनोंके काममें भिन्नता थी। पर शास्त्रोंमें यह भेद नहीं था। शास्त्रोंने तो कहा कि दोनोंको समान मोक्ष मिलेगा — अगर प्रामाणिकतासे अपना-अपना काम करेंगे।

आज तो प्रोफेसरको अिज्जत भी ज्यादा और पैसा भी ज्यादा देते हैं। अिसलिअे दो बातें होनी चाहियें। हरअेकको थोड़ा-थोड़ा श्रम करना चाहिये। अगर बिना काम किये खाते हैं, तो हमारा जीवन पापी बनता है। और दूसरी चीज, कामोंका मूल्य समान होना चाहिये। यह जब होगा तब श्रमकी प्रतिष्ठा होगी। आज तो श्रम करनेवाले कहते हैं कि हमें ज्यादा छुट्टियां मिलनी चाहिये। आठ घंटे काम करना पड़ता है अुसके बजाय सात घंटे काम होना चाहिये। और छः घंटा हो जाय तो और भी अच्छा। अैसा सब क्यों हो रहा है? अिसलिअे कि अूपरके वैसा करते हैं। प्रोफेसर सालमें छः माह छुट्टी लेते हैं। मेहतरको तो छुट्टी दे ही नहीं सकते थे, तो पोस्टमैनको छुट्टी देने लगे।

यह सब हमें मिटाना है और श्रमकी प्रतिष्ठा कायम करनी है। अिसलिअे हमने भूदान-यज्ञ और संपत्ति-दान शुरू किया है।

विनोबा

www.vinoba.in

हरिजनसेवक

१२ दिसम्बर १९५३

स्वार्थपूर्ण मांग

भारतीय व्यापार-अुद्योग संघने सरकारने हाल ही में कर-व्यवस्था की जांचके लिअे जो कमीशन (टेक्सेशन अिनक्वायरी कमीशन) नियुक्त किया है अुसकी प्रश्नमालाका जवाब दिया है। जवाब भारतीय व्यापार-अुद्योग संघ जैसी पूंजीवादी संस्थाके अनुरूप ही है। अुसमें कहा गया है कि सरकारकी कर-नीति अैसी होनी चाहिये कि खानगी अुद्योग अपना कार्य योग्यतापूर्वक पूरा कर सकें। अपने अिस कार्यका अुसने अैसा वर्णन किया है मानो वह कोअी परसेवाका कार्य है। कहा गया है कि सरकारको खानगी अुद्योगोंके प्रति अैसी नीति अपनानी चाहिये, जिससे वे अुत्पादन बढ़ाकर लोगोंको ज्यादा काम-धंधा और राष्ट्रीय आयकी वृद्धिमें ज्यादा योग दे सकें, यद्यपि सच्ची बात कही जाय तो यह विश्वास करना कठिन है कि खानगी अुद्योगोंका अैसा कोअी अुद्देश्य होता है।

खैर, अभी हम संघकी दलील सुनें। जवाबमें आगे यह कहा गया है कि अुत्पादनकी वृद्धिके लिअे यह जरूरी है कि खानगी अुद्योगोंके पास वर्तमान कर-प्रणालीमें अुचित परिवर्तन करके काफी पूंजी रहने दी जाय। यानी संघके कथनानुसार 'सरकार कर-व्यवस्थाको अपनी आयकी प्राप्तिका साधन-मात्र न माने, बल्कि अुसके जरिये लोगोंको पैसा बचाने, बचे हुअे पैसेको अुद्योगोंमें लगाने, और अुपभोगकी मात्रा बढ़ानेके लिअे -- जहां तक अिनका आपसमें मेल किया जा सकता हो वहां तक -- प्रोत्साहन देना चाहिये।' संघ यह भी चाहता है कि सरकार खानगी अुद्योगों और व्यापार-अुद्योगमें पूंजी लगानेवाले सामान्य लोगोंको राष्ट्रीयकरण, संपत्तिकी जब्ती और करकी अधिकताके डरसे मुक्त करे। सिर्फ अितना ही नहीं, संघने खानगी अुद्योगोंके लिअे सरकारी अुद्योगोंके साथ समानताका भी दावा किया है, और कहा है कि खानगी अुद्योगों पर बहुत ज्यादा कर लगाकर सरकारी अुद्योगोंको खानगी अुद्योगोंसे आगे नहीं बढ़ने देना चाहिये और न अुन्हें अिस तरह अपनी पूंजी बढ़ाने देना चाहिये। अपने अिस दावेके समर्थनमें अुसने पूंजीवादी अर्थशास्त्रमें प्रचलित अपने पक्षकी अर्थशास्त्रीय मान्यताओंका हवाला भी दिया है और कहा है कि "चूंकि आज हमारे यहां ये सारे कर जनसंख्याके अेक बहुत छोटे हिस्से पर लादे गये हैं, अिसलिअे वे अिस वर्गकी बचत कम करते जा रहे हैं।" संघने कर-व्यवस्थाका अुपयोग आर्थिक विषमतायें दूर करनेके लिअे करनेकी नीतिका भी विरोध किया है। अिस सिलसिलेमें अुसका कहना यह है कि "अैसा करनेसे हम लोगोंमें समृद्धि नहीं, गरीबी बांटते हैं।" अिसलिअे "हमें सबसे पहले तो बांटी जानेवाली संपत्तिकी वृद्धिकी ही कोशिश करनी चाहिये।" अिस संस्थाकी रायमें अैसा करनेका तरीका यह है कि खानगी अुद्योगोंको सरकारी सहायता देकर और ज्यादा विकास करने देना चाहिये। यानी अुत्पादनकी वृद्धि और करकी कमीके जरिये अुन्हें अधिकाधिक पूंजी अिकट्ठी करनेकी छूट मिलनी चाहिये, ताकि वे खूब मुनाफा कमायें और अिस पैसेका अपने क्षेत्रमें पूंजीके रूपमें अधिकाधिक ज्यादा व्यवहार करें। अितना ही नहीं, संयम और विचारको तिलांजलि देकर अुसने यह मांग करनेकी हिम्मत की है कि गरीब जनताके नमक पर भी कर लगाया जाय। भगवान्‌की दया मानना चाहिये कि अुसने खुलकर यह नहीं कहा कि शराबबन्दी खतम कर दी जाय, और शराबसे होनेवाली आयका लाभ अुठाया जाय। अुसकी यह मांग भी है कि आयके अूपरी हिस्सों पर करकी मात्रा कम कर दी जाय, और जिन अुद्योगोंको सरकार बढ़ावा देना चाहती हो, अैसे कुछ अुद्योगोंमें लगायी गयी पूंजीके साथ रियायतका व्यवहार हो -- अुदाहरणके लिअे, अुन्हें आयकर या संपत्ति-करसे छूट दी जाय।

भारतीय व्यापार-अुद्योग संघके जवाबका अूपर जो सारांश दिया गया है, अुससे पाठकको अिस बातका पर्याप्त संकेत मिल गया होगा कि वह कमीशनसे और अुसके जरिये देशकी जनतासे क्या कहना चाहता है। क्या यह संघ और वे वर्ग, जिनका वह प्रतिनिधि है, अिस बातको महसूस करते हैं कि खानगी अुद्योगोंको भी जनताके सामान्य हितकी अुतनी ही परवाह करनी चाहिये जितनी सरकारी अुद्योगोंको? अगर व्यापार और अुद्योग कर नहीं देंगे, तो हमारे अिस गरीब देशमें और कौन देगा? जब कि हमारी जनताका अधिकांश अपना पेट भरनेका भी खर्च अुठानेमें असमर्थ है, तब अिस बातकी मांग करना कि अुन्हें बचत करनेकी और पूंजी अिकट्ठी करनेकी सुविधा दी जाय कहां तक न्यायपूर्ण है? क्या यह मांग अुनके सम्मान और देशभक्तिकी भावनाके अनुकूल है? करका बोझ सब लोगों पर न्यायोचित रीतिसे बांटा जाय, अिस दलीलके आधार पर क्या कोअी यह मांग कर सकता है कि गरीबसे गरीब लोगों तक पर पड़नेवाला, हर मनुष्यसे लिया जानेवाला, नमकका कर शुरू कर दिया जाय? पक्की बात है कि ये वर्ग शराब और मादक वस्तुओंसे होनेवाली आयका भी स्वागत करेंगे। जब वे ये सारी मांगें रखते हैं, तो अुन्हें अिस बातका खयाल क्यों नहीं आता कि वे जिन लोगों पर कर लगवाना चाहते हैं, वे अुसका बोझ अुठानेमें बिलकुल असमर्थ हैं, अुन्हें मालूम नहीं कि बचत क्या है और पूंजी क्या है। वे अपना पेट ठीक तरहसे भर सकें, अितना भी तो अुन्हें नहीं मिलता। अपना बोझ कम करने और अुसे अुन पर डालनेके लिअे कहना वर्ग-मनोवृत्तिसे पैदा हुअी अैसी निरी निष्ठुरता है, जिसका अुदाहरण सिर्फ पश्चिममें पूंजीवादके विकासके अितिहासमें मिलता है। क्या व्यापार-अुद्योग संघ अपना और देशका विकास अुसी दिशामें करना चाहता है? तो फिर वह समझ ले कि वह हारी बाजी खेल रहा है। जैसा कि मैं पहले अेक अंकमें कह चुका हूं, भारतीय अुद्योग और पूंजीके सामने आज सवाल यह है कि वे अपने क्षेत्रमें भूदानके सिद्धान्तका प्रयोग शुरू करें और अपना स्वार्थ सिद्ध करनेके लिअे दूसरोंको लूटनेकी जिस नीतिका चलन हमारे यहां ब्रिटिश शासनने शुरू किया था, व्यापार और अुद्योगमें अुस नीतिको अब और न चलने दें। अुन्हें झूठी विज्ञापनबाजीके जरिये अपने मालकी बिक्री बढ़ानेकी आधुनिक व्यापार-नीतिके प्रचारसे भी बचना चाहिये। कोअी शंकाशील व्यक्ति यह सवाल अवश्य खड़ा कर सकता है कि अगर अिन सदुद्देश्योंकी सिद्धिका रास्ता न मिले, तब? मैं मानता हूं कि अैसी शंका अवश्य की जा सकती है। लेकिन हमें निराश होनेकी जरूरत नहीं। हम अपने देशमें जनतंत्रकी बढ़ती हुअी शक्तिका विश्वास कर सकते हैं; वह अितनी असरकारक जरूर होगी कि हमारी कर-व्यवस्था और नयी आर्थिक नीति -- जिसकी बुनियाद बेकारी दूर करनेका तात्कालिक राष्ट्रीय कर्तव्य है -- अुस गलत रास्तेमें न फंसेगी, जो कि संघने कर-निर्धारण कमीशनको सुझाया है।

४-१२-'५३

भगनभाअी देसाअी

पुनश्च -- अुत्साही पाठकोंसे निवेदन है कि वे १-८-'५३ के हरिजनसेवकमें प्रकाशित मेरे 'सर्वोदय और कर-निर्धारण' शीर्षक लेखको भी देख जायं, जो अिसी विषय पर और हमारे देशकी कर-नीतिके सवालके बारेमें है।

(अंग्रेजीसे)

www.vinoba.in

बेकारी — समस्या नहीं, अेक रोग

हम विद्यार्थियोंसे लेकर चोटीके नेताओं तकके मुंहसे लगातार बेकारीके सम्बन्धमें चर्चा होते सुनते आ रहे हैं, किंतु शायद किसीको भी अैसा नहीं लगता कि यह कोअी समस्या ही नहीं है। यथार्थमें यह अेक बीमारी है, जिस पर हम सबको पूरा-पूरा ध्यान देना चाहिये।

मनुष्यको जीवित रहनेके लिअे अनेक वस्तुओंकी आवश्यकता पड़ती है तथा अिनकी पूर्ति ही अुसके जीवनका आधार है। जब वह अपनी आवश्यकताओंकी प्राप्तिमें संलग्न रहता है, तब हम मानते हैं कि वह लाभदायक काममें लगा हुआ है। पक्षी अेक फल तोड़कर खाता है। बादमें स्वाभाविक परिस्थितियोंमें अुसका बीज कहीं पर गिरकर अुग आता है और अेक नयी सृष्टिको जन्म देता है। अिस तरह अनजानमें ही पक्षी लाभकारी कार्यमें लगा होता है — जब वह फल खाता है अुस समय भी और जब वह बीज गिराता है तब भी। अुसी तरह मानव-जीवनमें भी हम अपनी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिअे जो कुछ भी करते हैं तथा अुसके फलका हम जिस तरह अुपभोग करते हैं, वही अकसर 'काम' के नामसे पुकारा जाता है। जब अिस प्रकारकी पूर्ति या कार्यका अभाव रहता है, तो अुसे हम 'बेकारी' कहते हैं। बेकारी अुस समय आती है, जब कि हम अपने सहयोगी सामाजिक जीवनमें अपने ही प्रयत्नोंसे अपनी आवश्यकताओंकी पूर्ति नहीं कर पाते। अिस प्रकारकी पूर्ति करना सामाजिक कार्य नहीं है, बल्कि वह श्वासोच्छ्वासकी तरह हमारा जीवन ही है। अुसके बगैर हम मृत्युकी ओर बढ़ते हैं। बेकारी अेक समस्या नहीं, बल्कि बीमारी है। जिस तरह अधिक खानेसे किसीको अपचन हो जाय, तो अपचनको हम समस्या नहीं कह सकते — वह हमारे ही कामका परिणाम मात्र है। अुसका कोअी अलग 'हल' भी नहीं निकल सकता। पर अिलाज आसान है। यही कि अधिक खाना बन्द कर हम अपनी जीभ पर ताला लगावें।

अंतिम रूपमें अिस प्रकारकी सहयोगी सामाजिक स्थिति सार्वत्रिक नहीं हो सकती। वह योग्य सीमाओंमें ही कामयाब हो सकती है तथा अुसी समय, जब कि समाजकी सारी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिअे अुसका संगठन किया जाय। हम जितने ज्यादा अपनी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिअे अन्य सामाजिक संगठनोंके प्रयत्नों पर निर्भर रहेंगे, अुतनी ज्यादा हमारे अपने समाजमें रहनेकी संभावना कम हो जायगी। अिस प्रकार 'रोजगार' को हम जिंदगी कह सकते हैं।

बेकारीकी अुपस्थिति अिस बातका स्पष्ट लक्षण है कि हम अपनी आवश्यकताओंकी पूर्ति अपने प्रयत्नोंसे नहीं कर रहे हैं। सरल शब्दोंमें हम अपनी आवश्यकताओंकी पूर्ति विदेशोंसे, दूसरोंके किये हुअे प्रयत्नोंसे कर रहे हैं। यह अच्छा लक्षण नहीं है। अिस समस्याको हल करनेके लिअे अपनी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिअे हमें स्थानीय संगठन करने होंगे। अिसीका नाम है 'स्वदेशी'। अिसलिअे बेकारीको दूर करनेका अुपाय है स्वदेशीकी भावनाको प्रोत्साहन देना।

हमारे देशसे तिलहन, चमड़ा और हड्डी आदि कच्चा माल विदेशोंको भेजा जाता है, और वहांसे पक्का माल तैयार होकर आता है। अिस प्रकार कच्चे मालकी पक्के मालसे होनेवाली अिस अदला-बदलीके फलस्वरूप रोजगार समाप्त हो जाता है — लोगोंको काम नहीं मिलता। किंतु यह हमारे हाथकी बात है कि हम अिसको बदलकर बेकारीकी समस्या हल करें। दूसरे शब्दोंमें हमें स्वयं ही अपनी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिअे कच्चेसे पक्का माल तैयार करना चाहिये। सिर्फ तेल पेरने और चमड़ा पकानेके धंधोंको ही यदि पुनर्जीवित किया जाय, तो लाखों तेलियों और चमारोंके जीवनमें नअी आशा और चमक आ जायगी। सिर्फ अिसी प्रकार हम अपने लोगोंको सच्चा जीवनप्रद और सम्माननीय काम दे सकते हैं, न कि अनुत्पादक कामोंमें लगाकर वेतनके रूपमें 'भत्ता' देकर। अिसलिअे कच्चे मालका निर्यात और पक्के मालका आयात ये ही बेकारी बढ़ानेके प्रमुख कारण हैं। जब तक अिस स्थितिको नहीं बदला जाता, तब तक 'कामके जरिये' खोजना निरर्थक है।

अिसी प्रकार जहां मनुष्य-शक्तिको अुपयोगमें न लाकर हम श्रम बचानेवाली मशीनोंका प्रयोग करते हैं वहां भी बेकारी बढ़ती है। यह जरूरी है कि हम अपनी बेकारीकी समस्याका हल अिन्हीं मानवीय साधनों द्वारा करें। रोजमर्राके अुपयोगकी चीजोंके केन्द्रित अुत्पादनसे प्रगट होता है कि हमने मनुष्यकी अपनी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिअे स्वयं काम करनेकी स्वाभाविक प्रवृत्तिमें बाधा डाली है।

हमारे अुपरोक्त विचारोंसे प्रगट होता है कि बेकारी हमारी अपनी ही दुष्प्रवृत्तियों या पापका परिणाम है। अिस बेकारीकी सामाजिक बीमारीके अिलाजके लिअे सरकार अैसा बहुतसा कार्य संगठित कर सकती है, जिससे लोग अपनी आवश्यकताओंकी पूर्ति स्वयं कर सकें। अन्य नागरिक भी अिस कार्यमें अपने ही लोगों द्वारा बनाअी गअी चीजोंसे काम चलाकर सहयोग दे सकते हैं। संक्षेपमें, अिसका अर्थ होता है स्वदेशीकी भावनाका प्रसार तथा अुत्पादनके लिअे विकेन्द्रीकरणके सिद्धान्तका अमल। अिस शैतानका अन्त सिर्फ प्रार्थना और अुपवास अर्थात् सही विचार और अपने आपको काबूमें रखनेसे ही हो सकता है। आअिये, हम दृढ़ संकल्पके साथ अिस धरातल पर अिस राक्षसका जड़से नाश करनेके लिअे जूझ पड़ें, फिर हमें अिसकी चाहे जो कीमत चुकानी पड़े।

(नवम्बरकी 'ग्रामोद्योग पत्रिका' से) **जो० कॉ० कुमारप्पा**

भूदान और बेदखली

खेदकी बात है कि आजकल गांवोंमें गरीब किसानोंकी बेदखलियां अेक आम बात हो गअी है। शायद अुसका मूल कारण यह है कि कअी राज्य-सरकारें जमींदारी मिटानेके सिलसिलेमें नये काश्तकारी कानून बना रही हैं, जिसके कारण जमींदारों और बड़े किसानोंके मनमें अुनकी जमीन आगे-पीछे अुनके हाथसे चली जानेवाली है, अैसा डर समा गया है और वे भरसक अधिक जमीन पकड़ रखनेकी कोशिश कर रहे हैं।

यह तो स्पष्ट है कि अिन बेदखलियोंका कारण भूदान-आन्दोलन नहीं है। लेकिन यह जरूर अेक बहुत प्रस्तुत सवाल है कि यह आन्दोलन बेदखलीके अिस नये सवालसे कैसे निपटे।

जब १ जुलाअी, १९५२ को अुत्तर प्रदेशमें सरकारकी ओरसे 'जमींदारी विसर्जन दिवस' मनाया गया था, तब आचार्य विनोबाने अपने प्रार्थना-प्रवचनमें यह कहा था कि अुन्हें अिसकी खुशी महसूस नहीं होती, क्योंकि अिससे लाखों बेजमीनोंकी हालतमें कोअी फर्क नहीं पड़ता। वे तो जहां थे वहीं रहेंगे। जब अुनका ध्यान अुस समय हो रही बेदखलियोंकी तरफ खींचा गया, तो अुन्होंने अुत्तर प्रदेश सरकारको अुन्हें रोकने और बन्द करनेके लिअे कहा था। और अखबारोंमें आयी हुअी रिपोर्टोंके अनुसार अुत्तर प्रदेश सरकारने अपने अधिकारियोंको वैसी हिदायतें भेजी भी थीं। पर अुनका कोअी खास नतीजा नहीं आया। विनोबाजीने किसानोंको यह सलाह दी थी कि वे बेदखल होना नामंजूर कर दें, और अपनी जमीन किसी भी हालतमें न छोड़ें। यह सलाह वे बराबर देते आये हैं। लेकिन अकसर अैसा होता है कि किसानमें अिस सलाह पर चलनेके लिअे जरूरी शक्ति या साहस नहीं होता, और वह अपनेको भाग्यके भरोसे छोड़ देता है।

www.vinoba.in

अैसी हालतमें बेदखल हुअे किसानके प्रति भूदान-कार्यकर्ताका क्या कर्तव्य है?

बेदखल हुअे किसानोंकी दो श्रेणियां बनाअी जा सकती हैं: (१) वे जिनके पास बेदखल होनेके बाद भी पांच अेकड़ या अुससे ज्यादा जमीन बची रहती है। (२) वे जो बिलकुल बेजमीन हो जाते हैं। फिलहाल भूदान-कार्यकर्ता पहली श्रेणीके किसानोंको तो सहानुभूतिके सिवा कोअी दूसरी व्यावहारिक मदद नहीं कर सकता। लेकिन जहां दूसरी श्रेणीके किसानोंका सवाल है, वहां वह बेदखल करनेवाले जमींदारके पास पहुंचेगा और अुसे वह जमीन दान करनेके लिअे कहेगा, ताकि वह अुस किसानको दुबारा दे दी जाय। अैसी आशा की जाती है कि अगर जमींदारको यह बात भलीभांति विनय-भावके साथ और अुसका औचित्य सिद्ध करते हुअे समझायी जाय, तो प्रयत्न सफल होगा और बेदखल हुअे किसानोंको जमीन वापिस मिल जायगी।

अिस तरहके अेक मामलेको, पिछले अगस्तमें, बोधगयामें खुद विनोबाजीने जिस तरह सुलझाया था, वह अिस पद्धतिका बहुत अुपयुक्त अुदाहरण है। लेकिन अुसके बारेमें यह कहा जा सकता है — और यह सही भी है — कि हर कोअी तो विनोबा नहीं है कि अुनकी तरह हमेशा सफल ही हो। लेकिन गया जिलेका ही अेक दूसरा अुदाहरण भी है: गया जिलेके फतेहपुर थानेमें अेक किसानको बेदखल कर दिया गया था। वहां अुस समय श्री गोविन्दराव नामके अेक भूदान-कार्यकर्ता काम कर रहे थे। जब श्री गोविन्दरावको यह मालूम हुआ तो वे अुक्त जमींदारके पास गये, अुसे सारा मामला समझाया और अनुरोध किया कि वह जमीन अुस किसानको भूदानकी तरह वापिस कर दी जाय। अिस अनुरोधका अनुकूल परिणाम आया, जमीन वापिस मिल गयी और फिर अुसी किसानको दे दी गयी, जो अब अुसका मालिक भी हो गया। सविनय अनुरोधकी जीतका वह अेक अच्छा अुदाहरण था। जाहिर है कि अगर श्री गोविन्दरावको भी सफलता मिल सकती है, तो कोअी कारण नहीं कि किसी दूसरेको क्यों नहीं मिलेगी।

अिस तरह भूदान-कार्यकर्ता जमींदार और किसानके संघर्षको बढ़ावा नहीं देता और न वह यदि कहीं अैसा संघर्ष हो तो अुसकी अुपेक्षा करता है। अुसका काम तो नम्र अनुरोधके जरिये जमींदारकी न्यायबुद्धिको प्रभावित करने और तदनुसार आचरण करनेके लिअे राजी करनेका है। सच पूछो तो भूदान-आन्दोलन किसी भी तरहकी कटुता पैदा किये बिना जमींदारोंको समयका संकेत पहचाननेे और तदनुसार व्यवहार करनेकी शिक्षा देता है।

साथ ही यह समझ लेना चाहिये कि भूदान जमीन (या सम्पत्ति) की वैयक्तिक मालिकी स्वीकार नहीं करता। यदि आज नहीं तो कल सारी जमीन समाजके पास आनेवाली है, जो कि अुसे, जैसा परिवारमें होता है अुसी तरह, लोगोंकी जरूरतके अनुसार बांट देगा। लेकिन जब तक यह अवस्था नहीं आती, तब तक जमीन-मालिकोंकी बार-बार समझानेकी कोशिश करते रहना चाहिये, और अुन्हें न सिर्फ अुनके कर्तव्यकी याद दिलाकर, बल्कि परिवारके अुन मूक भाअियोंके — जिन्हें बेजमीन कहा जाता है, अधिकारकी याद दिलाकर भी, भूदान करने पर राजी करते रहना चाहिये।

अन्तमें, यह भी याद रखना चाहिये कि ज्यों-ज्यों भूदानका वातावरण व्यापक बनेगा, बेदखलियां अपने-आप बन्द हो जायेंगी। जमींदार लोग जमींदारीका स्वेच्छापूर्वक त्याग कर देंगे, कोअी बेजमीन नहीं रहेगा, और सारी जमीन समाजकी होगी। आवश्यकता अिसी अेक बातकी है कि भूदान-कार्यकर्ता काफी संख्यामें आगे आवें और भूदानका संदेश गांव-गांव और झोंपड़ी-झोंपड़ी तक पहुंचा दें।

१३-११-'५३ सुरेश रामभाअी
(अंग्रेजीसे)

मंदिर-शुद्धि

जब दिल्लीमें मैंने सुना कि वैद्यनाथ धामके पंडाओंने या चंद रूढ़िवादी सनातनियोंने श्री विनोबा भावे पर आक्रमण किया, तब मुझे आनंद हुआ। श्री विनोबाको विशेष चोट न लगी, अिसका आनंद गौण वस्तु थी। मुझे अिस बातका आनंद था कि सनातनियोंने अपनी गुप्त विरोध-नीति छोड़कर सीधा हमला करना आवश्यक समझा। मुझे विश्वास है कि रूढ़िवादके अिस अेक कदमसे रूढ़िवादकी अपनी कबर खुद गअी है।

सनातन हिन्दू धर्मका दुर्भाग्य है कि अुसने अपने रक्षणका भार अंध रूढ़ि और जड़ परंपराके हाथमें सौंप दिया है। अंध रूढ़ि और जड़ परंपरा केवल जड़ और अंध ही नहीं, वह कायर और धूर्त भी है।

रूढ़िवादने हमारे ब्राह्मणोंको संकुचित बना दिया। अुन्होंने कहना शुरू किया कि धर्मशास्त्र तो सिर्फ ब्राह्मण ही पढ़ सकते हैं। बाकीके सब लोगोंको धर्मके बारेमें अज्ञान रखनेमें ही रूढ़िवादने अपनी सुरक्षितता देखी। अीश्वरकी कृपा थी कि भारतके संतोंने अिस रूढ़िवादका प्रतिवाद किया और धर्मका ज्ञान आबालवृद्ध सबको दे दिया।

रूढ़िवादने हमारे राजाओंको और अुनके मंत्रियोंको जड़ बना दिया और देखते-देखते देश परतंत्रताके गर्तमें जा गिरा। रूढ़िवादने पुराने अितिहासका लोप किया, वर्तमान अितिहासकी अुपेक्षा की और भविष्यमें भी कोअी जाग्रति न पैदा हो अिसलिअे अूटपटांग भविष्य पुराण भी लिख मारा।

सर्वनाशका अितना मादा तैयार करनेके बाद देशमें अगर परतंत्रता आ जाय तो अिसमें आश्चर्य ही क्या है?

मंदिर-प्रवेशकी ही बात हम सोचें। अुन्होंने पूजाका अधिकार सिर्फ ब्राह्मणोंके और पुजारियोंके हाथमें ही रखा। हरिजनोंके लिअे तो मंदिर-प्रवेश निषिद्ध ही कर डाला। लेकिन मैंने अेक अैसा भी सनातनी मंदिर देखा है, जिसमें मंदिरमें प्रवेश पानेवाले सवर्ण हिन्दुओंको आज भी अिसकी शर्म नहीं है कि जहां ये सवर्ण पुरुष दर्शनके लिअे जा सकते हैं, वहां अुनकी माताओंको, बहनोंको, पत्नियोंको और लड़कियोंको प्रवेशका अधिकार नहीं है। क्योंकि वे स्त्री-जाति हैं।

दुर्बलोंका दमन करनेवाले अिस रूढ़िवादकी परदेशी राज्यकर्ताओंके सामने कुछ न चली। भिन्नधर्मी राजाओंके राजकर्मचारी अिन सनातनी रूढ़िवादियोंकी मर्यादा थोड़े ही मान्य रखनेवाले थे! कअी बार भिन्नधर्मी राजकर्मचारियोंने मंदिरोंमें जाकर तहकीकात की है। तब ये निर्वीर्य रूढ़िरक्षक असमंजसमें पड़े कि अब क्या किया जाय। गायकी विष्ठा और मूत्रसे मंदिरको पवित्र कर सकते थे। लेकिन अगर अिससे भी चिढ़कर राजदूत सजा करें तो?

रूढ़िवादका बुद्धिबल कभी हारा नहीं। अुसने धर्मशास्त्रकी मदद ली और कहा — ना विष्णुः पृथिवीपतिः। पृथ्वीका मालिक राजा मनुष्य होते हुअे भी प्रत्यक्ष विष्णु ही है। अिस वास्ते वह तो मंदिरमें आ ही जायेगा।

राजाका यह अधिकार मान्य करनेके बाद अिन कायरोंने युक्तिवाद चलाया कि राजा शब्दमें राजाके सब कर्मचारी भी आ जाते हैं। यहां तक कि कोअी पुलिस भी आ जाय तो वह भी राजाका प्रतिनिधि होनेके कारण नररूपेण खड़ा रहनेवाला अेक बड़ा देवता ही है।

www.vinoba.in

अिस तरह चाहे किसी भी धर्मका हो, राजा, अुसके कर्मचारी और अुसकी पुलिसको मंदिर-प्रवेशकी अिजाजत धर्मशास्त्रसे ही सिद्ध हुअी। राज्यकर्त्ताके साथ राज्यकर्त्ताके धर्मके सब लोगोंको भी अेक तरहकी प्रतिष्ठा देनेका अिलाज सनातन रूढ़िके पास है।

गुजरातमें अगर कोअी धर्म-मार्तण्ड ब्राह्मण हरिजनको छू जाय, तो अिस महापापका प्रायश्चित्त रूढ़िवादके अनुसार दो तरहसे हो सकता ह। या तो वह सनातनी धर्मनिष्ठ पुरुष अपने कपड़े अुतारकर भिगो ले और स्वयं नखशिखान्त स्नान कर ले या अगर अितनी तकलीफ बरदाश्त न हो सके, तो किसी मुसलमानको जाकर छू ले। सब पाप अुतर जाता है। जब महात्मा गांधी शुरू-शुरूके दिनोंमें अस्पृश्यता-निवारणके लिअे गुजरातमें दौरा करते थे, तब कभी-कभी अुनके साथ महम्मदअली-शौकतअली भी जाते थे। सनातनियोंने यह अच्छा मौका पाया। सभामें खूब आने लगे। जब तक सभामें अलीबन्धु जैसे विशालकाय मुसलमान हों, तब तक अस्पृश्यताका डर बिलकुल नहीं था। जब यह बात महात्माजीके ध्यानमें लायी गयी, तब अुन्हें अिस बातका स्पष्टीकरण करना पड़ा।

सनातनियोंकी अेक दूसरी खूबी है। अगर किसी कुत्तेने मिट्टीके घड़ेके पानीमें मुंह डाला, तो वे कहेंगे कि पानी फेंक दो और घड़ा फोड़ दो। मगर धातुके बरतनमें कुत्तेने मुंह डाला तो कहेंगे कि पानी फेंक दो और बरतन आग पर रखकर गरम कर लो तो शुद्ध हो जायगा। लेकिन अगर किसी कुत्तेने घीके कनस्तरमें मुंह डाला या थोड़ा चाट भी लिया, तो अूपर-अूपरका थोड़ासा घी फेंक देनेसे काम चल जायगा। कनस्तर और कनस्तरका घी अशुद्ध नहीं माना जायगा। अिसी तरह अगर बड़े मेलेमें सैकड़ों और हजारों लोग अिकट्ठा हुअे और अुनमें अनजानमें हरिजन आये और अुनका स्पर्श हुआ, तो अैसे समय पर 'स्पृष्टास्पृष्टिर्न विद्यते' — छुआछूत है नहीं।

अैसा कहकर वे रोजमर्राके जीवनमें छुआछूत कायम रख देते हैं। अगर किसी ब्राह्मणको लाचारीसे किसी ब्राह्मणेतरके साथ अेक पंक्तिमें बैठना पड़े, तो पंक्तिभोजनका दोष टालनेके लिअे वह चुपचाप कोयलेकी अेक लकीर दोनोंके बीच खींचेगा। और कहेगा कि लकीरके कारण अेक पंक्तिकी दो पंक्तियां हो गअीं। अिस वास्ते पंक्तिदोष रहा नहीं। भोजन करते-करते अगर पड़ोसके आदमीका स्पर्श हुआ, तो गुस्सेमें आकर ब्राह्मण थाली छोड़कर चला जायगा। लेकिन अगर अैसा नहीं कर सकता है तो अपनी दो आंखोंसे पानीका स्पर्श करके शुद्ध हो जायगा और आरामसे खायेगा।

यह सब कहनेके मानी अितने ही हैं कि आचरणमें रूढ़िवादीसे चाहे जितनी तबदीली करवाअिये, छुआछूतका भेद वह दिलसे हटने नहीं देगा। अगर बिहारके प्रधानमंत्री श्रीबाबू हरिजनोंको लेकर देवगढ़के मंदिरमें गये, तो सनातनी कहेंगे कि वे तो राजपुरुष हैं। प्रत्यक्ष विष्णुके अवतार! अुनके साथ जितने भी लोग आयेंगे, अुनके दर्शन और स्पर्शसे अुस वक्तके लिअे पवित्र होंगे।

अैसी लचीली रूढ़िको तोड़ना आसान नहीं है। मंदिरके पंडे-पुजारी अक्सर अितने लोभी और अवसरवादी होते हैं कि अुनको दबानेसे वे दब तो जाते हैं, लांगूलचालन करनेके लिअे भी तैयार होते हैं। लेकिन मौका मिलते ही अपनी पुरानी चाल कायम रखते हैं।

अिसलिअे सच्चा अुपाय यही है कि जिस तरह सिख लोगोंने गुरुद्वारा शिरोमणि प्रबंधक सभा कायम करके सत्याग्रहके बल पर अपने-अपने गुरुद्वारोंका कब्जा ले लिया, अुसी तरह शुद्ध सनातनियोंको अिन मंदिरोंका कब्जा रूढ़िवादियोंसे छीन लेना चाहिये और मंदिरोंकी व्यवस्थामें आमूलाग्र परिवर्तन करना चाहिये।

स्वराज्यके दिनोंमें सत्याग्रह करनेकी आवश्यकता नहीं है और शिरोमणि सभाके जैसी किसी अेक जमातके हाथमें मंदिरोंका कब्जा देनेकी भी जरूरत नहीं है। जिस तरह मद्रासकी ओर Temple's Endowment Act हुआ है और मंदिरोंकी ओरसे होनेवाले खर्चेका प्रबंध मुकर्रर किया है, अिसी तरह सारे देशमें मंदिरोंकी संपत्तिका विनियोग सुव्यवस्थित हो जाय अैसा अिलाज करना चाहिये।

सबसे पहले यह तय होना चाहिये कि मंदिरों पर किसी व्यक्ति विशेषका स्वामित्व न रहे; सारे समाजका स्वामित्व रहे। अिसमें हरिजन भी शुमार हों। और मंदिरकी प्रबंधक-समितिमें चमार या भंगीमें से कोअी-न-कोअी अेक सदस्य अवश्य हो।

दूसरी बात यह तय हो कि मंदिरमें कोअी पुजारी न हो। भक्त लोग पहलेसे अिजाजत लेकर अपना क्रम और समय तय करें। और अुस समय जाकर मंदिरमें पूजा करें। मंदिरकी साफ-सफाअीका और अुत्सवोंका प्रबन्ध प्रबंधक-समितिके द्वारा हो। मूर्ति पर अभिषेक करनेका और नैवेद्य चढ़ानेका अधिकार हरिजन आदि सब जातियोंको रहे।

मंदिरमें जो नैवेद्य या भोग चढ़ाया जाता है, अुसमें भात, रोटी आदि कच्ची रसोअीके पदार्थ बिलकुल न हों। सूखा मेवा, ताजा मेवा और मिठाअी आदि सर्वग्राह्य चीजोंका ही भोग लगानेका नियम हो।

मंदिरमें नामस्मरण या कीर्तनके नाम पर शोर-बकोर और कोलाहल करनेकी अिजाजत किसीको न हो। मंदिरमें शांत, गंभीर, पावन और प्रसन्न वायुमंडल रखा जाय और वहां पर अगर संगीतका प्रबंध रहे, तो वह भी सात्त्विक ढंगका हो। मंदिरोंमें रणभेरी आदि जंगी वाद्योंके लिअे अवकाश नहीं होना चाहिये।

अुत्सवोंके दिन सब लोगोंको मंदिरमें बुलाया जाय और शुद्ध सात्त्विक भक्तिका और मानवोचित सदाचारका अुपदेश हो या संत-साहित्यका पारायण चले।

मंदिरोंकी संपत्तिमें से संस्कृत भाषाका अध्ययन बिना किसी भेदभावके सब लोगोंको सुलभ किया जाय। संस्कृतमें पाली, अर्धमागधी आदि भाषायें भी आ जाती हैं। मंदिरके साथ अेक पुस्तकालय भी अवश्य हो, जिसमें लोगोंको धर्मका ज्ञान और धार्मिक पुस्तकें पढ़नेका अवसर मिले।

मंदिरके साथ अेक पशु-चिकित्सालय भी अवश्य होना चाहिये, जिसके जरिये गाय, बैल, घोड़ा, कुत्ता आदि सब अैसे पशुओंकी सेवा हो, जिनकी सेवा मनुष्य हमेशा लेता आया है।

अिस तरह मंदिरोंके द्वारा धर्मोचित समाजसेवाके अनेक प्रकार हम चला सकते हैं। आजकल मंदिरोंमें जो अनाचार चलता है, देवदासियोंको मंदिरोंमें रखा जाता है, वह सब तुरन्त बन्द होना चाहिये। सबके सब मंदिर धर्मप्रधान संस्कृतिके जीवित केन्द्र बनने चाहियें।

हमारे मंदिरोंमें जहां तहां धर्मवचन लिखने या खुदवानेका प्रयत्न नहीं होना चाहिये। अैसे वचनोंसे मंदिरोंका वायुमंडल जैसा चाहिये वैसा नहीं रहता। धर्मवचनोंके लिअे अेक अलग कमरा या कक्ष रखना चाहिये, जिसमें धर्मवचनकी अनेक शिलायें पारी पारीसे रखी जा सकती हैं।

मंदिर जो आज जड़ जरठ रूढ़िवादके किले बन गये हैं, अुन्हें जीवित, प्रगतिशील मानवताके विकासके केन्द्र बनाना चाहिये। और अुनका प्रबंध समाजमान्य सदाचारी लोकसेवकोंके हाथमें रखना चाहिये।

श्री विनोबाके अूपर जो घातक आक्रमण हुआ, अुसके फलस्वरूप अगर मंदिरोंकी व्यवस्थामें अितना परिवर्तन हो जाय, तो वह अेक बड़ा लाभ ही होगा। संतोंके कष्टोंका लाभ समाजको पूरा-पूरा मिले यही अिष्ट है।

काका कालेलकर

www.vinoba.in

आधुनिक व्यापार-अुद्योगकी अर्थनीति

कुछ कसेरा-मंडलोंकी ओरसे अेक विनतीपत्र मिला है। अुसमें यह शिकायत की गअी है कि जंगरहित लोहेकी चद्दरोंसे बरतन बनने लगे हैं, जिससे तांबे-पीतलका कसेरोंका धन्धा नष्ट होता जा रहा है। पहले अेक लेखमें अेक भाअीने शिकायत की थी कि अेल्युमिनियमकी खोजने मिट्टीके बरतनोंके ग्रामोद्योग पर बुरा असर किया है। अब बरतनोंके लिअे दूसरी धातु लोहेकी खोज हुअी है, अिसलिअे यह प्रश्न अुठानेकी अुसकी पारी आअी है।

अिन सबके कारण मिट्टीके, लकड़ीके और पत्थरके बरतन पीछे पड़ गये हैं, यह याद रखना चाहिये। अुनका पीछे पड़ना जरूरी था, क्योंकि स्वास्थ्य या लोकहितकी दृष्टिसे अुन बरतनोंमें कुछ कमी मालूम हुअी थी — अैसी बात नहीं है। लेकिन विज्ञान और प्रगतिके जो नये झोंके आते हैं, अुनके कारण अैसी नअी-नअी बातें पैदा होती रहती हैं और विज्ञानके नाम पर तथा प्रगतिके मदमें वे चलती रहती हैं।

लेकिन अिस बारेमें शंका है कि अैसे परिवर्तनोंका परिणाम अच्छा ही आता है। अिसके परिणाम बड़े गहरे और दूरगामी हैं, यह अब पश्चिमी जगतको भी दीखने लगा है। तात्कालिक नतीजा तो साफ है कि अिससे समाजमें चलते और काम देते पुराने धन्धे नष्ट हो जाते हैं, अुनमें काम करनेवाले लोग बेकार बन जाते हैं। अुन्हें किसी तरहका मुआवजा देनेकी तो बात ही नहीं होती। वे भूखों मरते हैं और जैसे मिलें वैसे दूसरे धन्धे खोजते हैं, या सिर पर हाथ रखकर अीश्वरको या सरकारको दोष देते हैं। दूसरी ओर, जो नये धन्धे पैदा होते हैं, अुनमें नये प्रकारके नफे खाये जाते हैं और नये-नये आदमी घुसते हैं।

अिन नये धंधोंकी पद्धतिमें विशेषता यह देखनेमें आती है कि अुनसे सम्बन्ध रखनेवाले मालके बारेमें बहुतसा मुख्य काम दूसरे देशोंमें होता है, जहांसे अैसी नअी-नअी खोजें आती हैं। नये धंधोंवाले लोग केवल देशमें अुनके नाम पर कमा खाने जितनी चतुराअी या योग्यता बताते हैं। परिणामस्वरूप वे धन्धे विदेशोंको भी फायदा पहुंचाते हैं और अिस तरह अुसे काफी लाभ और धन्धा मिल जाता है। पुराने धन्धोंके बजाय नये धन्धोंका यह अेक विशेष दुर्गुण माना जायगा।

दूसरे, अिन धन्धोंके सफल होनेकी पद्धति भी देखने जैसी है। वे विज्ञानके नाम और फैशनके जोर पर तरक्की करते हैं; अुनमें कलाकी मदद ली जाती है और तरह-तरहके सच्चे-झूठे विज्ञापनोंका मोहक जाल बिछाया जाता है। आज नअी दुनियामें अिस प्रकारकी अेक बड़ी जबरदस्त चीज चल रही है। और वह टिक जाती है अिसलिअे अुसका अुपयोग बढ़ता है, और अुसके लिअे जरूरी वर्ग पैदा होते हैं।

अेक और विशेष बात यह है कि अिस तरह जो धंधा चलता है, अुससे पैदा होनेवाली बिक्रीकी आयका लाभ सबको अेकसा नहीं मिलता; बल्कि अमुक वर्ग ही अुसका अधिक हिस्सा खींच सकते हैं। अिस कारणसे पूंजीवाद और गरीब-अमीरके बीच भारी असमानता पैदा होती है।

मनुष्य-समाजका अितिहास देखेंगे तो पता चलेगा कि हरअेक युगमें ज्ञान-विज्ञानके रूपमें नये-नये वहम और नअी-नअी गैरजरूरी लेकिन फैशनेबल बनकर आनेवाली बातें पैदा होती रहती हैं। अुपर्युक्त ढंगके धन्धे करनेके लिअे आज ये बातें होती हैं और अुसमें ज्ञान-विज्ञानका भी दुरुपयोग किया जाता है। यह पश्चिमकी पैदा की हुअी समाज-जीवनकी व्यापार-अुद्योगवादी पद्धतिकी खास अर्थनीति बन गअी है। दुःखकी बात यह है कि अुसमें प्रगति और समृद्धि मानी जाती है। जब तक यह भयंकर दृष्टि बदल न जायगी, तब तक जमाना बदलनेकी बात संभव नहीं है। गांधीजी अिस तरहका दृष्टि-परिवर्तन चाहते थे। कुछ अर्वाचीन मतवादी गांधीजीकी अिस बातको धार्मिक या आध्यात्मिक कह कर और साधु बननेका — गरीबीका प्रेम आदि गलत नाम देकर आज अुसकी निन्दा करते हैं। लेकिन वे लोग केवल अपने ही वर्गका ध्यान रखकर अैसी बात करते हैं और दुनियाभरमें झूठी साबित हुअी अूपरकी वर्तमान अर्थ-पद्धतिमें रहा समाज और मानवताका द्रोह नहीं देखते, जिसकी ओर गांधीजीने हमारा ध्यान खींचा था। भारतसे अिस नये विश्व-दर्शनकी आशा की जाती है।

३–१२–'५३ मगनभाअी देसाअी
(गुजरातीसे)

सरदारश्रीको श्रद्धांजलि

१५ दिसम्बरको हमारा देश दिवंगत सरदार साहबको भक्तिभावसे याद करेगा। अुन्हें गये तीन बरस हो गये; जैसे-जैसे दिन बीतते हैं, वैसे-वैसे समय अैसा आता जा रहा है जब सरदार लोगोंको अधिकाधिक याद आते हैं। लोग कहते हैं: "अिस समय यदि सरदार होते तो कितना अच्छा होता! ये काम कैसे अच्छे ढंगसे पार लगते!" अब देशके कार्य जोरोंसे चलानेका सुअवसर आया है, और सरदारकी कार्यशक्ति पर सब खुश थे। लेकिन यह बड़े दुःखकी बात है कि अैसे ही मौके पर वे हमारे बीच नहीं हैं।

लेकिन सरदारके लिअे अपने गुरुके चले जानेके बाद लम्बे समय तक जीना असंभव था। अेक तरहसे देखा जाय तो दो शरीरोंके होते हुअे भी बापू और सरदार अेक ही थे। बापू देशके लिअे सोचते-विचारते और कहते थे, सरदार अुसके अनुसार काम करते थे। यह जोड़ी टूटनेके बाद सरदार जैसे लोग ही लम्बे समय तक टिक सकते हैं। और अैसा वे कर सके अपने सामने पड़े हुअे देशके विराट कार्यको पूरा करनेकी अुत्कट भावनाके बल पर ही। फिर भी अन्तमें शरीरके धर्म किसे छोड़ते हैं? अिसलिअे काम करते-करते वे चले गये। आज अुनका स्मरण करके हम अुनके अपार देशप्रेम, अथाह कार्यशक्ति और अचूक व्यवहारदक्षताके गुणोंको अपनाकर मौजूदा सवालोंको हल करनेका प्रयत्न करें और अिस तरह अुनका सच्चा तर्पण करें।

५–१२–'५३ म० प्र०
(गुजरातीसे)

सरदार वल्लभभाअी

[पहला भाग]

नरहरि परीख

कीमत ६–०–० डाकखर्च १–३–०

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद–९

विषय-सूची

		पृष्ठ
काम पानेका हक	गांधीजी	३२१
धन्यवाद	मगनभाअी देसाअी	३२१
हमारे दो बड़े दुर्गुण	विनोबा	३२२
मेहनत-मजदूरीकी महिमा	विनोबा	३२२
स्वार्थपूर्ण मांग	मगनभाअी देसाअी	३२४
बेकारी — समस्या नहीं, अेक रोग	जो० कॉ० कुमारप्पा	३२५
भूदान और बेदखली	सुरेश रामभाअी	३२५
मंदिर-शुद्धि	काका कालेलकर	३२६
आधुनिक व्यापार-अुद्योगकी अर्थनीति	मगनभाअी देसाअी	३२८
टिप्पणी:		
सरदारश्रीको श्रद्धांजलि	म० प्र०	३२८

www.vinoba.in